कक्षा 12

अर्थशास्त्र
अनुपूरक पाठ्यसामग्री

भाग क : व्यष्टि अर्थशास्त्र - एक परिचय

(मार्च 2010 की परीक्षा के लिए)

केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, दिल्ली

प्रीत विहार, दिल्ली - 110092

भाग क : प्रारम्भिक व्यष्टि अर्थशास्त्र

इकाई - 1

उत्पादन संभावना वक्र

उत्पादन संभावना वक्र, केन्द्रीय समस्या 'क्या उत्पादन किया जाए' पर प्रकाश डालने का एक रेखाचित्रिय माध्यम है। यह निर्णय लेने के लिए कि क्या उत्पादन किया जाए और कितनी मात्रा में किया जाए पहले यह जानना आवश्यक होता है कि आखिर हम प्राप्त क्या कर सकते हैं। उत्पादन संभावनाओं से हमें पता चलता है कि हमारे पास क्या विकल्प हैं, यानि क्या-क्या उत्पादन संभावनाएँ हैं।

हम क्या-क्या प्राप्त कर सकते हैं, निम्नलिखित पूर्वधारणाओं पर आधारित है :-

1. उपलब्ध संसाधनों की मात्रा निश्चित है।
2. उत्पादन तकनीक में कोई परिवर्तन नहीं आता।
3. सभी संसाधन रोजगार में लगे हैं।
4. सभी संसाधन कुशलता से रोजगार में लगे हैं।
5. संसाधन की कुशलता सभी उत्पादों के उत्पादन में एक जैसी नहीं है। अत: यदि किसी संसाधन को एक वस्तु के उत्पादन से हटा कर किसी दूसरी वस्तु के उत्पादन में लगा दिया जाए तो लागत बढ़ने लगती है। अन्य शब्दों में सीमांत अवसर लागत बढ़ जाती है।

अंतिम पूर्वधारणा को थोड़ा और समझना आवश्यक है क्योंकि यही उत्पादन संभावना चक्र के आकार को निर्धारित करती है। यदि हम इस पूर्वधारणा में परिवर्तन कर देते हैं तो वक्र का आकार भी बदल जाता है।

उत्पादन में कुशलता से अभिप्राय उत्पादिता, यानि संसाधन के प्रति इकाई उत्पादन से है। मान लीजिए यह संसाधन श्रमिक है। कल्पना कीजिए कि अर्थव्यवस्था में केवल दो वस्तुओं का ही उत्पादन होता है। मान लीजिए कि ये दो वस्तुएँ 'क' और 'ख' हैं। एक श्रमिक है जो वस्तु 'क' के उत्पादन में लगा है क्योंकि वह इसमें सर्वाधिक कुशल है। अर्थव्यवस्था निर्णय लेती है कि 'क' का उत्पादन घटा कर 'ख' का उत्पादन बढ़ाए। अत: श्रमिक को 'क' से हटाकर 'ख' के उत्पादन में लगा दिया जाता है। लेकिन वह 'ख' के उत्पादन में उतना कुशल नहीं है जितना कि 'क' के उत्पादन में। 'ख' में उसकी उत्पादिता कम हो जाती है। इससे उत्पादन लागत बढ़ जाती है।

परिणाम स्पष्ट है। यदि संसाधन एक वस्तु के उत्पादन से हटा कर दूसरी वस्तु के उत्पादन में लगाएँ तो हमें कम और कम कुशलता वाले संसाधनों को ही हटा कर उत्पादन करना होगा। इससे सीमांत अवसर लागत (Marginal Opportunity Cost) बढ़ने लगती है, जिसे हम रूपांतरण की सीमांत दर (Marginal Rate of Transformation) भी कहते हैं। आइए समझें कि इस दर से क्या अभिप्राय है।

रूपांतरण की सीमांत दर (Marginal Rate of Transformation)

अध्ययन को सरल रखने हेतु मान लीजिए कि एक अर्थव्यवस्था में केवल दो वस्तुओं का ही उत्पादन होता है। मान लीजिए कि ये वस्तुएँ बंदूक और मक्खन हैं। यह एक प्रसिद्ध उदाहरण है जो कि अर्थशास्त्री सैम्युलसन

(Samuelson) ने दिया है। इसमें बन्दूक रक्षा वस्तुओं की प्रतीक है और मक्खन नागरिक वस्तुओं का। वास्तव में विश्व के सभी देशों को चुनाव की इस समस्या का सामना करना पड़ता है।

मान लीजिए कि यदि सभी संसाधन केवल बन्दूकों के उत्पादन में ही लगा दिये जाएँ, तो हम केवल 15 बन्दूकें (15 लाख, 15 करोड़ या किसी भी इकाई में) ही बना सकते हैं। दूसरी और यदि ये केवल मक्खन के उत्पादन में लगाएँ तो केवल 5 इकाई मक्खन ही बना सकते हैं। ये दो चरम संभावनाएँ हैं। इनके बीच में और बहुत-सी संभावनाएँ हो सकती हैं, यदि हम कुछ संसाधन एक वस्तु पर और कुछ दूसरी वस्तु पर लगाएँ। दो चरम और उनके बीच की संभावनाओं को मिला कर हम एक अनुसूची का निर्माण कर सकते हैं, जिसे हम उत्पादन संभावना अनुसूची की संज्ञा दे सकते हैं। मान लीजिए यह अनुसूची इस प्रकार है :

उत्पादन संभावना अनुसूची

संभावनाएँ	बन्दूक (इकाई)	मक्खन (इकाई)	सीमांत रूपांतरण दर = $\frac{\Delta \text{ बन्दूक}}{\Delta \text{ मक्खन}}$
A	15	0	-
B	14	1	1 बन्दूक:1 मक्खन
C	12	2	2 बन्दूक:1 मक्खन
D	9	3	3 बन्दूक:1 मक्खन
E	5	4	4 बन्दूक:1 मक्खन
F	0	5	5 बन्दूक:1 मक्खन

इस तालिका में 'A' एक चरम संभावना है। इसमें समाज सारे संसाधन बन्दूक के उत्पादन में लगा देता है, मक्खन में कुछ भी नहीं। मान लीजिए कि समाज चाहता है कि एक इकाई मक्खन का उत्पादन भी करे। अब क्योंकि सारे संसाधन कुशलतापूर्वक बन्दूक के उत्पादन में लगे हैं, कुछ संसाधन बन्दूक के उत्पादन से हटा कर और उन्हें मक्खन के उत्पादन में लगा कर ही मक्खन का उत्पादन किया जा सकता है। मान लीजिए एक इकाई मक्खन का उत्पादन करने के लिए एक इकाई बन्दूक में लगे संसाधनों को हटाना काफी होगा। यह एक दूसरी उत्पादन संभावना है जिसमें रूपांतरण की सीमांत दर = 1 बन्दूक / 1 मक्खन है। अब यदि देश में मक्खन की एक और इकाई की आवश्यकता हो तो बन्दूकों के उत्पादन से कुछ और संसाधन हटाने होंगे। अब रूपांतरण दर बढ़ कर 2 बंदूक / 1 मक्खन होगी क्योंकि अब कम दक्ष संसाधनों का उपयोग करना पड़ेगा। इस प्रकार रूपांतरण दर बढ़ती जाएगी।

रूपांतरण दर की परिभाषा अब इस प्रकार की जा सकती है। <u>एक वस्तु की त्यागी गयी मात्रा और बदले में दूसरी वस्तु की एक और इकाई के उत्पादन का अनुपात रूपांतरण की सीमांत दर कहलाता है।</u>

$$\text{रूपांतरण की सीमांत दर} = \frac{\text{एक वस्तु की त्यागी गयी मात्रा}}{\text{दूसरी वस्तु की अतिरिक्त मात्रा का उत्पादन}} = \frac{\Delta \text{ बन्दूक}}{\Delta \text{ मक्खन}}$$

अथवा, किसी वस्तु की एक इकाई का उत्पादन करने हेतु दूसरी वस्तु की त्यागी गयी मात्रा रूपांतरण की सीमांत दर कहलाती है।

उत्पादन संभावना वक्र

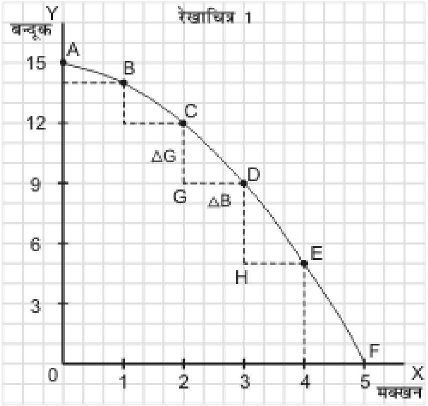

उत्पादन संभावना अनुसूची को रेखाचित्र में बदल कर हम उत्पादन संभावना वक्र प्राप्त कर सकते हैं। रेखाचित्र उपरोक्त अनुसूची पर आधारित है। इसमें मक्खन का उत्पादन X–अक्ष पर और बंदूक का उत्पादन Y–अक्ष पर दिखाया गया है।

वक्र पर हम रूपांतरण की सीमांत दर भी माप सकते हैं। उदाहरण के तौर पर संभावनाओं C व D के बीच दर CG/GD है। D और E के बीच यह दर DH/HE है।

संभावना वक्र का ढाल (slope) सीमांत रूपांतरण दर का माप होता है। यदि हम एक अवतल (concave) वक्र पर बायें से दायें चले तो उसके ढाल का मूल्य बढ़ता जाता है। अतः सीमांत रूपांतरण दर भी बढ़ती जाती है।

विशेषताएँ

एक प्रतिनिधिक उत्पादन संभावना वक्र की दो विशेषताएँ हैं :

(1) बायें से दायें नीचे की ओर ढलवां

इसका अर्थ है कि एक वस्तु का अधिक मात्रा में उत्पादन करने के लिए दूसरी वस्तु का उत्पादन कम करना आवश्यक है, क्योंकि संसाधन सीमित है।

(2) मूलबिन्दु की ओर अवतल (Concave)

नीचे की ओर ढलवां अवतल वक्र का ढाल निरंतर बढ़ता जाता है। ढाल सीमांत रूपांतरण दर भी हैं अतः अवतलता का अर्थ है बढ़ती सीमांत दर। यह उत्पादन संभावना वक्र की एक पूर्वधारणा भी है।

क्या उत्पादन संभावना वक्र एक सीधी रेखा हो सकती है?

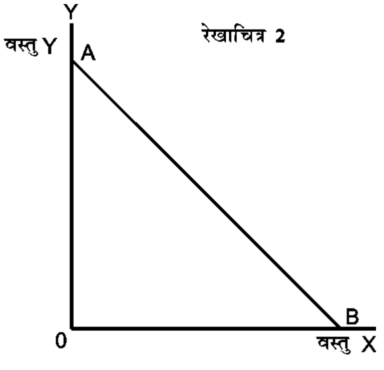

हाँ, यदि हम यह पूर्वधारणा करें कि रूपांतरण की सीमांत दर स्थिर रहती है, यानि ढाल स्थिर है। यदि ढाल स्थिर है तो वक्र एक सीधी रेखा का रूप ही लेगी। लेकिन सीमांत रूपांतरण दर किस स्थिति में स्थिर रहेगी? ऐसा तब संभव है जब हम यह पूर्वधारणा करें कि सभी संसाधन सभी वस्तुओं के उत्पादन में एक समान दक्ष हैं।

क्या उत्पादन केवल वक्र पर ही होता है?

हाँ भी और नहीं भी, दोनों। हाँ, यदि संसाधनों का पूर्ण और कुशल उपयोग किया गया हो। नहीं, यदि कुछ संसाधन बेकार हैं, या फिर संसाधनों का कुशलता से उपयोग नहीं किया गया है। रेखाचित्र 3 की ओर ध्यान दें।

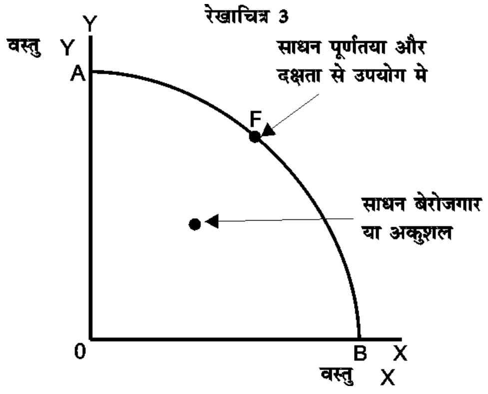

बिन्दु F पर, या फिर वक्र AB के किसी भी बिन्दु पर, संसाधनों का उपयोग पूर्णतया और कुशलता से किया गया है। वक्र के नीचे बिन्दु U पर, या फिर वक्र के नीचे किसी भी बिन्दु पर, या तो कुछ संसाधन बेरोजगार हैं, या फिर अकुशल हैं। इस प्रकार वक्र के नीचे कोई भी बिन्दु बेरोजगारी या अकुशलता की समस्या दिखाता है।

क्या वक्र खिसक सकता है?

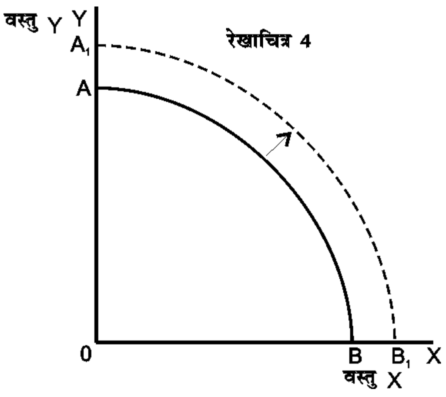

हाँ, यदि संसाधनों में वृद्धि हो जाए। अधिक श्रम, अधिक पूँजीगत वस्तुएँ, बेहतर प्रौद्योगिकी, सभी का अर्थ होगा दोनों वस्तुओं का अधिक उत्पादन। उत्पादन संभावना वक्र के पीछे यह पूर्वधारणा रहती है कि संसाधनों में कोई परिवर्तन नही होता! यदि संसाधनों में वृद्धि होती है तो पूर्वधारणा गलत हो जाती है, और वर्तमान वक्र उत्पादन संभावना वक्र नहीं रह जाता। संसाधनों के बढ़ने से एक नई वक्र बनती है जो कि वर्तमान वक्र के ऊपर रहता है।

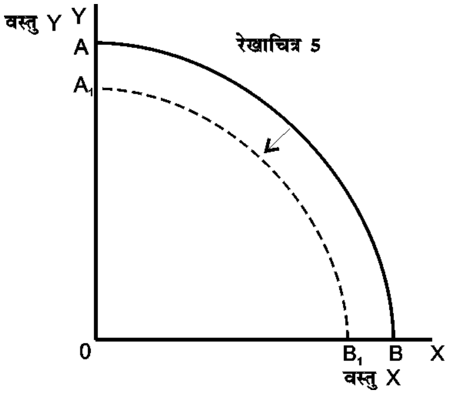

यदि संसाधन घट जाएं तो वक्र दाँयी ओर भी खिसक जाता है। ऐसी संभावना बहुत ही कम होती है। लेकिन कभी-कभी जनसंख्या कम हो जाने, प्राकृतिक आपदाओं, युद्ध आदि के कारण पूँजी भण्डार कम हो जाने से ऐसा हो भी सकता है।

इकाई - 2

उपभोक्ता संतुलन

भूमिका

जो अपनी आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए वस्तुएँ व सेवायें खरीदता है, वह **उपभोक्ता** कहलाता है। दी गयी कीमतों पर अपनी आय को विभिन्न वस्तुओं और सेवाओं पर व्यय करने के पीछे उसका उद्देश्य अधिकतम संतुष्टि प्राप्त करना होता है।

आइए एक साधारण उदाहरण से शुरू करें। मान लीजिए एक उपभोक्ता एक वस्तु खरीदना चाहता है। वह कितनी मात्रा खरीदेगा? इसका उत्तर उपयोगिता विश्लेषण की सहायता से दिया जा सकता है। इस हेतु कुछ अवधारणाओं की जानकारी आवश्यक है।

अवधारणाएँ

उपयोगिता : उपयोगिता का अर्थ वस्तु के उपभोग से प्राप्त संतुष्टि से है। किसी भी वस्तु में उपयोगिता उसी स्थिति में होगी जब यह आवश्यकता की पूर्ति कर सके। उपयोगिता व्यक्ति, स्थान और समय के साथ बदलती रहती है।

सीमांत उपयोगिता : वस्तु की एक अतिरिक्त इकाई का उपभोग करने से प्राप्त उपयोगिता सीमांत उपयोगिता कहलाती है। इसकी परिभाषा वस्तु की एक अतिरिक्त इकाई के उपभोग से कुल उपयोगिता में वृद्धि के रूप में भी की जा सकती है।

कुल उपयोगिता : वस्तु की सभी इकाइयों से प्राप्त उपयोगिताओं का जोड़ कुल उपयोगिता कहलाता है।

जैसे–जैसे हम किसी वस्तु का उपभोग करते हैं तो प्रत्येक अगली इकाई से प्राप्त उपयोगिता, यानि सीमांत उपयोगिता कम होती जाती है। इसे सीमांत उपयोगिता ह्रास नियम (Law of Diminishing Marginal Utility) की संज्ञा दी जाती है। इस नियम को हम निम्नलिखित अनुसूची की सहायता से स्पष्ट कर सकते हैं:

वस्तु की इकाईयाँ	कुल उपयोगिता (Utils)	सीमान्त उपयोगिता (Utils)
1	4	4 = (4-0)
2	7	3 = (7-4)
3	9	2 = (9-7)
4	10	1 = (10-9)
5	10	0 = (10-10)
6	9	-1 = (9-10)

इसमें हम पाते हैं कि जैसे-जैसे हम अतिरिक्त इकाई का उपभोग करते हैं, सीमांत उपयोगिता गिरती जाती है। यही सीमांत उपयोगिता ह्रास नियम है। इस नियम के अनुसार प्रत्येक अतिरिक्त इकाई के उपभोग से प्राप्त उपयोगिता कम होती जाती है।

पूर्वधारणाएँ (Assumptions)

उपयोगिता विश्लेषण निम्नलिखित पूर्वधारणाओं पर आधारित है:

1. उपयोगिता संख्या में मापी जा सकती है, यानि वह कार्डिनल (Cardinal) है।
2. उपयोगिता को मुद्रा में मापा जा सकता है।
3. उपभोक्ता की आय दी हुई है।
4. वस्तुओं और सेवाओं की कीमतें दी हुई हैं और स्थिर हैं।

संतुलन

(क) एक वस्तु की स्थिति में

मान लीजिए उपभोक्ता एक वस्तु खरीदना चाहता है। उस वस्तु की कीमत 3 रुपये प्रति इकाई है। उस वस्तु से प्राप्त उपयोगिता को युटिल (Util) में और युटिल को रुपये में मापते हैं। हमें उपभोक्ता की निम्नलिखित सीमांत उपयोगिता अनुसूची दी गई है।

मात्रा (इकाई)	कीमत (रु)	सीमांत उपयोगिता (युटिल)
1	3	8
2	3	7
3	3	5
4	3	3
5	3	2

जब वह पहली इकाई खरीदता है तो उसे 8 युटिल उपयोगिता प्राप्त होती है। लेकिन उसे केवल 3 रुपये देने पड़ते हैं। क्या वह पहली इकाई खरीदेगा? स्पष्ट है कि अवश्य खरीदेगा क्योंकि जितना वह देता है उससे अधिक वह पाता है। इसी प्रकार वह कीमत की तुलना प्राप्त उपयोगिता से करता रहेगा। वह केवल 4 इकाईयाँ खरीदेगा। चौथी इकाई पर कीमत और सीमांत उपयोगिता एक समान हो जाती हैं। यदि वह पाँचवी इकाई खरीदता है तो वह नुकसान में रहेगा क्योंकि इस इकाई से उसे केवल दो युटिल उपयोगिता मिलेगी जब कि उसे भुगतान 3 रुपये का करना होगा। अत: केवल 4 इकाई खरीदने पर ही उसे अधिकतम संतुष्टि मिलेगी। इस तरह केवल एक वस्तु खरीदने पर अधिकतम संतुष्टि केवल निम्नलिखित स्थिति में ही प्राप्त होगी।

सीमांत उपयोगिता = कीमत

(ख) दो वस्तुओं की स्थिति में

मान लीजिए एक उपभोक्ता केवल दो ही वस्तुएँ खरीदता है। ये X व Y वस्तुएँ हैं। उपभोक्ता की आय और दोनो वस्तुओं की कीमतें (Px and Py) दी हुई हैं। ऐसी स्थिति में उपभोक्ता अपनी आय इस प्रकार व्यय करेगा कि प्रत्येक वस्तु पर व्यय किये गए अंतिम रु० से उसे एक समान उपयोगिता मिले। ऐसा निम्नलिखित शर्त पूरा होने पर ही संभव है:

$$\frac{MUx}{Px} = \frac{MUy}{Py}$$ = एक वस्तु पर व्यय किये गये एक रुपये से प्राप्त सीमांत उपयोगिता

जहाँ MUx = x से प्राप्त सीमांत उपयोगिता

MUy = y से प्राप्त सीमांत उपयोगिता

संतुष्टि अधिकतम हो इसके लिए आवश्यक है कि उपरोक्त शर्त पूरी हो। लेकिन प्रश्न उठता है कि यदि यह पूरी न हो तो क्या फर्क पड़ता है? मान लीजिए कि दोनों वस्तुओं के अनुपात इस प्रकार है -

$$\frac{MUx}{Px} > \frac{MUy}{Py}$$

इसका अर्थ है कि प्रति रु. MUx प्रति रु. MUy से अधिक है। इसका अर्थ यह भी है कि यदि वह Y पर एक रु० कम खर्च करें और बदले में X पर एक रु० अधिक खर्च करें, तो उपभोक्ता को संतुष्टि का लाभ अधिक और हानि कम होगी। अत: वह Y पर खर्चा कम करके X पर खर्चा बढ़ाएगा। अधिक X खरीदने से MUx गिरती है क्योंकि Px स्थिर है इसलिए अनुपात MUx/Px भी गिरता है। Y कम खरीदने से MUy बढ़ता है क्योंकि Py स्थिर है, इसलिए MUy/Px बढ़ता है। यह परिवर्तन चलता रहेगा जब तक कि दोनों अनुपात एक समान न हो जाएँ। अन्य शब्दों में :

$$\frac{MUx}{Px} = \frac{MUy}{Py}$$ = प्रति रु. सीमांत उपयोगिता

उपयोगिता विश्लेषण की सीमाएँ

उयोगिता विश्लेषण की एक सीमा यह है कि उपयोगिता को संख्यातम रूप में मापा जाता है। वास्तव में उपयोगिता एक मानसिक सोच है जिसका कोई संख्यात्मक मानक माप नही हो सकता। इस विश्लेषण की कुछ अन्य सीमाएं भी हैं लेकिन इनका अध्ययन इस स्तर पर आवश्यक नहीं है।

मांग और मांग अनुसूची की अवधारणाएँ

मांग

मांग से अभिप्राय किसी वस्तु की उस मात्रा से है जो एक क्रेता एक निश्चित कीमत पर एक निश्चित अवधि में खरीदने के लिए तैयार होता है।

मांग अनुसूची

मांग अनुसूची एक ऐसी अनुसूची है जिसमें यह दिखाया जाता है कि एक निश्चित अवधि में विभिन्न कीमतों पर एक वस्तु के क्रेता उस वस्तु की कितनी-कितनी मात्रा खरीदने के लिए तैयार हैं।

मांग की कीमत लोच और कुल व्यय के बीच संबंध

अध्ययन के इस स्तर पर इस सम्बन्ध के बारे में आपके लिए निम्नलिखित जानकारी पर्याप्त है :

1. जब मांग लोचदार हो तो वस्तु की कीमत गिरने (बढ़ने) से उस पर होने वला कुल व्यय बढ़ (घट) जाता है। अथवा, कीमत गिरने (बढ़ने) से कुल व्यय में वृद्धि (कमी) हो जाए, तो उस वस्तु की मांग लोचदार कहलाती है।

2. जब लोच एक हो, तो वस्तु की कीमत गिरने (बढ़ने) से उस वस्तु पर होने वाले कुल व्यय में कोई परिवर्तन नही होता। अथवा यदि किसी वस्तु की कीमत घटने (बढ़ने) से उस वस्तु पर होने वाले कुल व्यय में कोई परिवर्तन न हो तो उसकी कीमत मांग लोच एक होती है।

3. जब मांग बेलोचदार हो तो वस्तु की कीमत गिरने (बढ़ने) से उस पर होने वाला कुल व्यय घट (बढ़) जाता है। अथवा, कीमत गिरने (बढ़ने) से कुल व्यय में कमी (वृद्धि) हो जाए, तो उस वस्तु की मांग बेलोचदार कहलाती है।

इकाई -3

उत्पादक का व्यवहार और पूर्ति

पूर्ति का अर्थ

पूर्ति से अभिप्राय वस्तु की उस मात्रा से होता है जिसे एक फर्म या उद्योग एक निश्चित कीमत पर निश्चित अवधि में उत्पादन करने को राजी होती है।

पूर्ति का नियम

पूर्ति के नियम के अनुसार यदि अन्य बातें पूर्ववत रहें, तो एक वस्तु की कीमत में वृद्धि उस वस्तु की पूर्ति में वृद्धि लाती है। अतः अधिक कीमत पर अधिक और कम कीमत पर कम मात्रा की पूर्ति होती है। इस नियम को पूर्ति अनुसूची और पूर्ति वक्र की सहायता से समझाया जा सकता है।

पूर्ति अनुसूची में दिखाया जाता है कि विभिन्न कीमतों पर एक निश्चित अवधि में वस्तु की कितनी-कितनी पूर्ति होगी।

पूर्ति अनुसूची

कीमत (रु.)	पूर्ति (इकाई)
1	100
2	200
3	300

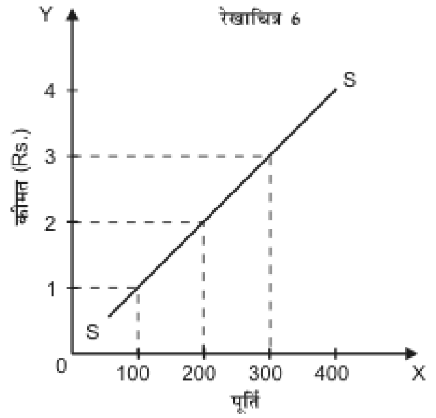

जब कीमत 1 रु. से बढ़कर 3 रु. हो जाती है तो पूर्ति 100 इकाई से बढ़कर 300 इकाई हो जाती है। पूर्ति के नियम का आधार क्या है? अन्य बातें पूर्ववत् रहने पर कीमत में वृद्धि होने से उत्पादक को प्राप्त लाभ में वृद्धि होती है। कीमत में वृद्धि जितनी होगी उतने ही अधिक लाभ बढ़ेंगे और उतना ही अधिक प्रोत्साहन उत्पादक को होगा कि वह पूर्ति बढ़ाए। कीमत में कमी होने पर लाभ कम हो जाते हैं और परिणामस्वरूप पूर्ति भी कम हो जाती है। इस प्रकार अन्य बातें पूर्ववत् रहने पर, एक वस्तु की कीमत और उसकी पूर्ति में सीधा सम्बन्ध होता है।

पूर्ति में परिवर्तन बनाम पूर्ति मात्रा में परिवर्तन

(पूर्ति वक्र का खिसकना बनाम पूर्ति वक्र पर चलना)

एक वस्तु की पूर्ति उसकी अपनी कीमत तथा अन्य कारकों जैसे आगतों की कीमतें, उत्पादन तकनीक, अन्य वस्तुओं की कीमतें, फर्म के उद्देश्य, वस्तु पर कर, आदि पर निर्भर करती है।

पूर्ति वक्र पर चलना (पूर्ति मात्रा में परिवर्तन)

पूर्ति का नियम, अन्य बातें पूर्ववत रहने पर, वस्तु की अपनी कीमत में परिवर्तन का पूर्ति पर प्रभाव के बारे में बताता है। पूर्ति वक्र के पीछे भी यही पूर्व धारणा है। अतः यदि केवल वस्तु की अपनी कीमत में परिवर्तन आता है, और पूर्ति पर प्रभाव डालने वाले अन्य कारकों में कोई परिवर्तन नहीं आता, तो पूर्ति में परिवर्तन केवल पूर्ति वक्र पर ही होता है। पूर्ति वक्र पर चलने का अर्थ यही है। पूर्ति वक्र के एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु पर जाने को **पूर्ति की मात्रा में परिवर्तन** की संज्ञा भी दी जाती है।

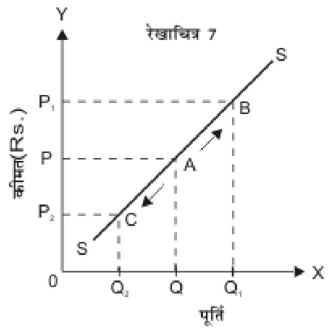

रेखाचित्र 7 में OP कीमत पर पूर्ति OQ है। जब कीमत बढ़ कर OP_1 हो जाती है तो पूर्ति बढ़ कर OQ_1 हो जाती है। इस प्रकार हम पूर्ति वक्र पर बिन्दु A से B की ओर चलते हैं। इसे पूर्ति का विस्तार कहते हैं।

इसी प्रकार जब वस्तु की कीमत OP से घटकर OP_2 होती है तो पूर्ति OQ से घट कर OQ_2 हो जाती है। अब हम पूर्ति वक्र पर बिन्दु A से C की ओर चलते हैं। इसे पूर्ति का संकुचन कहते हैं।

पूर्ति वक्र पर चलना केवल वस्तु की अपनी कीमत में परिवर्तन के कारण ही होता है, यह मान कर कि अन्य बातें पूर्ववत रहती हैं।

पूति वक्र का खिसकना (पूर्ति में परिवर्तन)

वस्तु की अपनी कीमत को छोड़कर यदि किसी अन्य कारकों में परिवर्तन आने से पूर्ति में परिवर्तन आता है, तो इससे पूर्ति वक्र खिसक जाता है। इसे पूर्ति में परिवर्तन भी कहते है।

पूर्ति में वृद्धि का अर्थ है उसी कीमत पर अधिक पूर्ति। परिणामस्वरूप पूर्ति वक्र दाँयी ओर खिसक जाता है। रेखाचित्र 8 में SS वक्र पर OP कीमत पर पूर्ति OQ है। जब पूर्ति वक्र खिसक जाता है तो उसी कीमत पर पूर्ति बढ़ कर अब OQ हो जाती है। इसका अर्थ यह भी है कि अब OQ मात्रा की पूर्ति कम कीमत OP_1 पर की जा सकती है। पूर्ति में वृद्धि कई कारणों से हो सकती है। उदाहरण के तौर पर यदि आगतों की कीमतें कम हो जाएँ या फिर उत्पादन तकनीक बेहतर हो जाए, तो उत्पादक उसी कीमत पर अधिक उत्पादन कर सकते हैं। इससे पूर्ति वक्र दाँयी और खिसक जाता है।

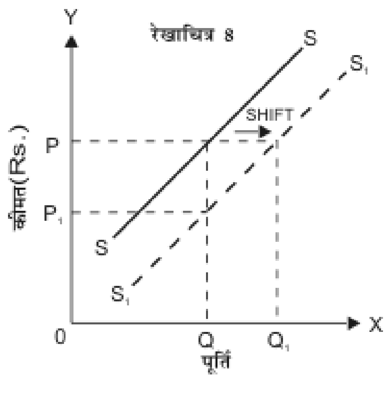

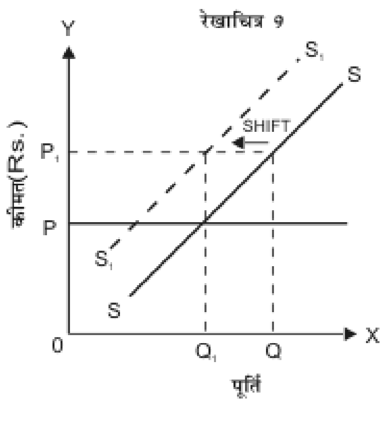

पूर्ति में कमी का अर्थ है उसी कीमत पर कम पूर्ति। इसका परिणाम पूर्ति व्रक का बाँयी और खिसकना है। रेखाचित्र 9 में OP कीमत पर S वक्र पर पूर्ति OQ है। इसी कीमत पर वक्र S_1 पर पूर्ति OQ_1 है। इसका अर्थ यह भी है कि OQ मात्रा की पूर्ति अब अधिक कीमत OP_1 पर ही की जा सकती है।

सारांश यह है कि किसी वस्तु के पूर्ति वक्र में खिसकाव उस वस्तु की अपनी कीमत को छोड़ कर पूर्ति पर प्रभाव डालने वाले किसी भी अन्य कारण से आता है। उदाहरण के लिए यदि आगतों की कीमतें गिर जाए या फिर अन्य वस्तुओं की कीमतें गिर जाएँ, तो उत्पादक उसी कीमत पर अधिक पूर्ति करने को तैयार हो जाते हैं। इसके परिणामस्वरूप पूर्ति वक्र बाँयी ओर खिसक जाता है।

उत्पादक संतुलन

एक उत्पादक का मुख्य उद्देश्य अधिकतम लाभ कमाना होता है। लाभ कुल आगम और कुल लागत का अंतर है। एक उत्पादक उस उत्पादक स्तर पर संतुलन की स्थिति में माना जाता है जिस पर उसके लाभ अधिकतम हो, और उसे उत्पादन घटाने या बढ़ाने की कोई आवश्यकता न हो। यदि वह उससे कम उत्पादन करता है तो लाभ अधिकतम स्तर से कम हो जाते हैं। यदि वह अधिक उत्पादन करता है तो भी कुल लाभ गिरने लगते हैं। अतः जिस उत्पादन स्तर पर कुल आगम और कुल लागत के बीच अधिकतम अंतर हो एक उत्पादक उसी स्तर पर अपने आप को विश्राम की स्थिति, यानि संतुलन में पाता है। (नोट : इस स्तर पर इस बात की व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं समझी गयी है कि एक उत्पादक विभिन्न बाजारों में संतुलन तक कैसे पहुँचता है।)

सीमांत लागत और औसत लागत के बीच संबंध

यह एक गणितीय संबंध है। इसे समझाने के लिए हम एक उदाहरण लेते हैं। हम एक अनुसूची लेते है जिसमें उत्पादन के विभिन्न स्तरों पर कुल लागत, सीमांत लागत और औसत लागत दिखायी गयी है। प्रथम कालम में उत्पादन है। दूसरे कालम में प्रत्येक उत्पादन स्तर पर कुल लागत है। तीसरे कालम में सीमांत लागत है (एक और इकाई उत्पादन करने से कुल लागत में होने वाली वृद्धि सीमांत लागत कहलाती है। अतः $MC_n = TC_n - TC_{n-1}$ जहाँ MC सीमांत लागत है और TC कुल लागत है और n व n-1 उत्पादन के स्तर हैं) चौथे कालम में औसत लागत है। कुल लागत को उत्पादन से भाग देने पर औसत लागत प्राप्त होती है।

लागत अनुसूची

उत्पादन (इकाई) (1)	कुल लागत (रु.) (2)	सीमांत लागत (रु.) (3)	औसत लागत (रु.) (4)
1	60	60	60
2	110	50	55
3	162	52	54
4	216	54	54
5	275	59	55

यह अनुसूची निम्नलिखित सम्बन्ध दर्शाती है:

1. यदि सीमांत लागत औसत लागत से कम हो तो औसत लागत घटती है।

उत्पादन की 3 इकाई तक सीमांत लागत औसत लागत से कम है। अत: औसत लागत गिरती है। 2 इकाई पर सीमांत लागत 50 रु॰ है जो कि पिछले औसत लागत 60 रु॰ से कम है। अत: औसत लागत 60 रु॰ से घट कर 55 रु॰ हो जाती है। 3 इकाई पर सीमांत लागत 52 रु॰ है जो पिछली औसत लागत 55 रु॰ से कम है। अत: औसत लागत 55 रु॰ से घट कर 54 रु॰ हो जाती है।

2. यदि सीमांत लागत औसत लागत के बराबर है तो औसत लागत स्थिर रहती है।

4 इकाई उत्पादन पर औसत लागत वही है जो 3 इकाई पर थी। 3 इकाई पर यह 54 रु॰ थी और 4 इकाई पर भी 54 रु॰ है। ऐसा इसलिए है क्योंकि 4 इकाई पर सीमांत लागत और 3 इकाई पर औसत लागत एक समान हैं।

3. यदि सीमांत लागत औसत लागत से अधिक हो तो औसत लागत बढ़ती है।

5 इकाई पर औसत लागत 54 रु॰ से बढ़कर 55 रु॰ हो जाती है क्योंकि 5 इकाई पर सीमांत लागत 59 रु॰ है जो कि 4 इकाई पर औसत लागत 54 रु॰ से अधिक है।

सीमांत लागत और औसत लागत का यह सम्बन्ध किसी भी चर के सीमांत मूल्य और औसत मूल्य पर लागू होता है, चाहे यह उत्पाद हो, आगम हो, आदि। नीचे बाक्स में इस सम्बन्ध का एक प्रमाण भी दिया गया है।

केवल संदर्भ हेतु

मान लीजिए औसत लागत गिर जाती है। अत:

$$\frac{TC_n}{n-1} < \frac{TC_{n-1}}{n-1}$$

दोनों तरफ n से गुणा करने पर

$$TC_n < TC_{n-1} \times \frac{n}{n-1}$$

$$TC_n < TC_{n-1} \times 1 + \frac{1}{n-1}$$

$$TC_n < TC_{n-1} + \frac{TC_{n-1}}{n-1}$$

$$TC_n - TC_{n-1} < \frac{TC_{n-1}}{n-1}$$

क्योंकि $TC_n - TC_{n-1} = MC$

और $\frac{TC_{n-1}}{n-1} = AC_{n-1}$

इसलिये $MC < AC$

औसत लागत तब घटती है जब सीमांत लागत औसत लागत से कम हो।

इसी तरह हम यह प्रमाण भी दे सकते हैं कि यदि औसत लागत बढ़ती है तो सीमांत लागत औसत लागत से अधिक होती है और यदि औसत लागत स्थिर रहती है तो सीमांत लागत औसत लागत के बराबर होती है।

जो सम्बन्ध सीमांत लागत और औसत कुल लागत के बीच है वही सम्बन्ध सीमांत लागत और औसत परिवर्ती लागत के बीच भी है क्योंकि स्थिर लागत का सीमांत लागत पर असर नहीं पड़ता। प्रमाण नीचे बाक्स में दिया गया है :

> केवल संदर्भ हेतु
>
> $MC_n = TC_n - TC_{n-1}$
>
> $= [TFC_n + TVC_n] - [TFC_{n-1} + TVC_{n-1}]$
>
> क्योंकि TFC_n व TFC_n बराबर हैं,
>
> अतः $MC_n = TVC_n - TVC_{n-1}$

<u>परिवर्ती अनुपातों का नियम</u>

(कुल उत्पाद और सीमांत उत्पाद वक्रों के आधार पर)

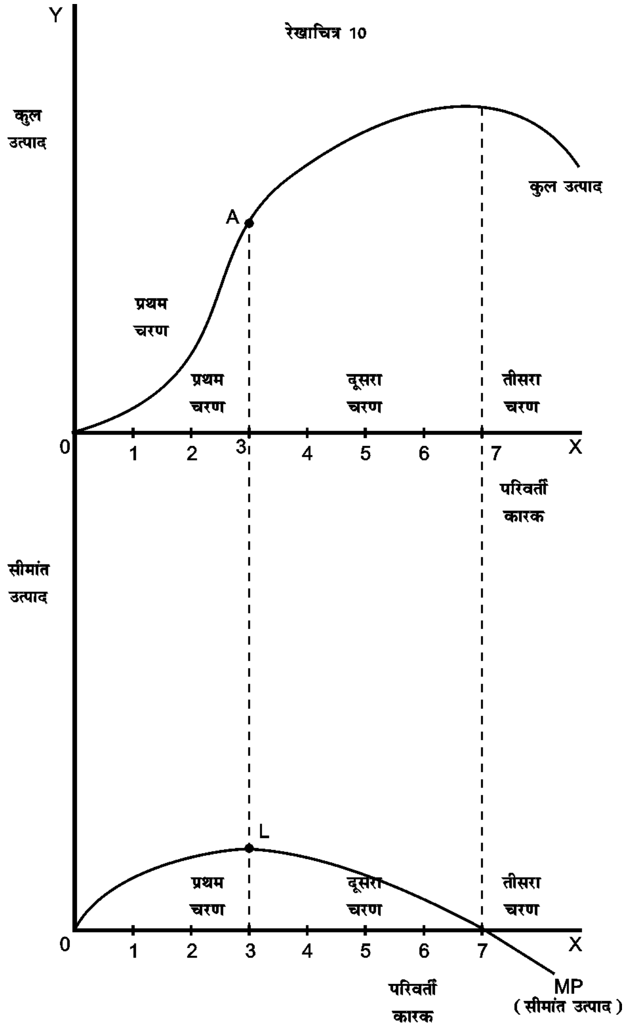

(1) कुल उत्पाद के आधार पर

परिवर्ती अनुपातों के नियम के अनुसार स्थिर आगत के साथ परिवर्ती आगत की इकाइयाँ बढ़ाने से कुल उत्पाद में शुरू में वृद्धि बढ़ती हुई दर से होती है। दूसरे चरण में यह वृद्धि घटती दर से होती है। अंततः तीसरे चरण में कुल उत्पाद घटने लगता है।

ये तीनों चरण रेखाचित्र 10 में कुल उत्पादक (TP) वक्र पर दिखाए गए हैं। बिन्दु A तक, यानि परिवर्ती आगत की 3 इकाईयों तक, कुल उत्पाद में वृद्धि बढ़ती दर से होती है। बिन्दु A से आगे और बिन्दु B तक दूसरा चरण है जिसमें कुल उत्पाद में वृद्धि घटती दर से होती है। यह स्थिति परिवर्ती आगत की 7 इकाई तक है। बिन्दु B पर कुल उत्पाद अधिकतम है। बिन्दु B के बाद, यानि परिवर्ती आगत की 7 इकाई के बाद, तीसरा चरण प्रारम्भ हो जाता है जिसमें कुल उत्पाद घटने लगता है।

(2) सीमांत उत्पाद के आधार पर

रेखाचित्र 10 में सीमांत उत्पाद वक्र इस नियम को दर्शाती है। सीमांत उत्पाद वक्र कुल उत्पाद वक्र से प्राप्त की गयी है। नियम के प्रथम चरण में सीमांत उत्पाद वक्र उपर की ओर ढलवाँ होता है। दूसरे चरण में नीचे की ओर ढलवाँ हो जाता है लेकिन OX - अक्ष से उपर रहता है। तीसरे चरण में यह नीचे की ओर ढलवां ही रहता है लेकिन OX - अक्ष से नीचे जाने लगता है। इन तीनों चरणों में सीमांत उत्पाद का व्यवहार इस प्रकार है -

प्रथम चरण : सीमांत उत्पाद में वृद्धि

दूसरा चरण : सीमांत उत्पाद गिरने लगता है लेकिन धनात्मक रहता है।

तीसरा चरण : सीमांत उत्पाद घटता है, ऋणात्मक होता है।

(नोटः TP वक्र से हम तीन चरणों की पहचान इस प्रकार कर सकते हैं :

प्रथम चरण : TP वक्र उत्तल (Convex) होती है

दूसरा चरण : TP वक्र अवतल (Concave) होती है

तीसरा चरण : TP वक्र बायें से दायें की ओर ढलवाँ होती है।)

उत्पादक के संतुलन की सीमान्त लागत व सीमान्त आगम विधि

परिचय

उत्पादक के संतुलन का तात्पर्य एक वस्तु के उत्पादन के उस स्तर से होता है जिस पर उसके उत्पादन को अधिकतम लाभ मिले। कुल संप्राप्ति और कुल लागत का अन्तर लाभ होता है। अतः उत्पादन का वह स्तर संतुलन स्तर कहलाता है जिस पर कुल संप्राप्ति और कुल लागत का अन्तर अधिकतम हो। उत्पादक के संतुलन की स्थिति ज्ञात करने की यह एक विधि है। इसके अनुसार उत्पादक के संतुलन की दो शर्तें होती हैं।

(1) कुल संप्राप्ति और कुल लागत का अन्तर अधिकतम हो और

(2) एक और इकाई के उत्पादन करने से लाभ घटने लगें।

<u>सीमान्त लागत-सीमान्त आगम विधि</u>

उत्पादक के संतुलन की स्थिति जानने की यह एक अन्य विधि है। इस विधि के अनुसार उपभोक्ता के संतुलन की दो शर्तें होती हैं:

(1) सीमान्त लागत और सीमान्त संप्राप्ति बराबर हों

(2) उत्पादन के जिस स्तर पर सीमान्त लागत और सीमान्त संप्राप्ति बराबर हैं उसके बाद के उत्पादन स्तर पर सीमान्त लागत सीमान्त संप्राप्ति से अधिक हो।

आइए अब इन शर्तों की व्याख्या करें।

(1) सीमान्त लागत = सीमान्त संप्राप्ति

एक अतिरिक्त इकाई का उत्पादन करने से यदि सीमान्त संप्राप्ति सीमान्त लागत से अधिक है तो यह लाभप्रद स्थिति है। जब तक यह स्थिति होगी अधिक उत्पादन करना लाभप्रद होगा और उत्पादन इस स्तर तक उत्पादन बढ़ाएगा जिस पर सीमान्त संप्राप्ति और सीमान्त लागत बराबर हो जाएँ। अतः जब तक सीमान्त संप्राप्ति सीमान्त लागत से अधिक उत्पादक संतुलन की स्थिति में नही है क्योंकि उत्पादन के बढ़ाने से लाभ बढ़ेगें।

जब सीमान्त संप्राप्ति सीमान्त लागत से कम होती है तब भी उत्पादक संतुलन की स्थिति में नही होता क्योंकि वह उत्पादन कम करके लाभ बढ़ा सकता है।

जब सीमान्त लागत सीमान्त संप्राप्ति के बराबर होती है तब उत्पादक संतुलन की स्थिति में होता है। यह उत्पादक के संतुलन की आवश्यक शर्त है। लेकिन केवल इस शर्त को पूरा होना पर्याप्त नही है। एक अन्य शर्त भी पूरी होनी चाहिये। वह शर्त है:

(2) उत्पादन के जिस स्तर पर सीमान्त संप्राप्ति और सीमान्त लागत बराबर हैं उसके बाद के स्तर पर सीमान्त लागत सीमान्त संप्राप्ति से अधिक हो। इस शर्त का पूरा होना इसलिए आवश्यक है क्योंकि यह संभव है कि सीमान्त संप्राप्ति और सीमान्त लागत एक से अधिक उत्पादन के स्तर पर बराबर हों। इन स्तरों में से कौन सा उत्पादन स्तर संतुलन स्तर है? इसका उत्तर इस शर्त से मिलता है। इनमें से उत्पादन का वह स्तर संतुलन स्तर है जिसके बाद सीमान्त लागत संप्राप्ति से अधिक हो। अतः सीमान्त लागत और सीमान्त संप्राप्ति की समानता उत्पादन के ऐसे स्तर पर होनी चहिए जिसे बढ़ाने या घटाने से लाभ घटे।

उत्पादक के संतुलन के लिए यह आवश्यक है कि सीमान्त लागत और सीमान्त संप्राप्ति बराबर हों और यह उस स्तर पर हो जिसके बाद सीमान्त लागत सीमान्त संप्राप्ति से अधिक हो।

उदाहरणों और रेखचित्रों द्वारा प्रस्तुति

उदाहरण 1

नीचे दी गई तालिका उस स्थिति को दर्शाती है जिसमें उत्पादक दी हुई कीमत पर जितनी मात्रा चाहे बेच सकता है।

कीमत रु० (प्रति इकाई)	उत्पादन (इकाईयाँ)	कुल संप्राप्ति रु०	कुल लागत रु०	सीमान्त संप्राप्ति (रु०)	सीमान्त लागत रु०	लाभ रु० रु०
8	1	8	6	8	6	2
8	2	16	14	8	8	2
8	3	24	20	8	6	4
8	4	32	28	8	8	4
8	5	50	38	8	10	2

इस उदाहरण में उत्पादन के 2 इकाई और 4 इकाई स्तरों पर सीमान्त लागत और सीमान्त संप्राप्ति बराबर हैं। लेकिन संतुलन की दूसरी शर्त उत्पादन के 4 इकाई के स्तर पर ही पूरी होती है। अतः उत्पादन का संतुलन स्तर 4 इकाई है।

<u>रेखाचित्र</u>

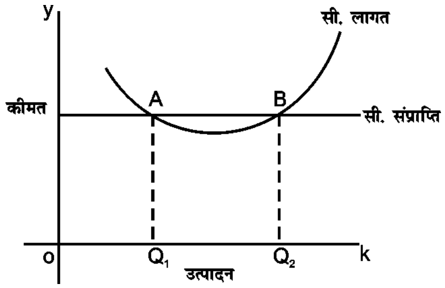

रेखाचित्र के रूप में उत्पादक के संतुलन शर्तें हैं:

(1) सीमान्त लागत वक्र सीमान्त संप्राप्ति वक्र को जिस बिन्दु पर काटे

(2) उस बिन्दु पर सीमान्त लागत वक्र सीमान्त संप्राप्ति वक्र को नीचे से ऊपर जाती हुई काटे।

पहली शर्त बिन्दु A और B दोनों पर पूरी होती है। लेकिन दूसरी शर्त केवल B बिन्दु पर पूरी होती है। B बिन्दु के बाद सीमान्त लागत सीमान्त संप्राप्ति से अधिक है। अतः उत्पादन का संतुलन स्तर OQ_2 है।

उदहारण 2

यह उदाहरण ऐसे स्थिति को दर्शाता है जब उत्पादक कीमत कम करके ही अधिक विक्रय कर सकता है।

कीमत(रु०) (प्रति इकाई)	उत्पादन (इकाईयाँ)	कुल संप्राप्ति रु०	कुल लागत रु०	सीमान्त संप्राप्ति (रु०)	सीमान्त लागत रु०	लाभ (रु०)
8	1	8	5	8	6	3
7	2	14	8	6	5	6
6	3	18	12	4	4	6
5	4	20	15	2	3	5
4	5	20	19	0	5	1

उत्पादन के 3 इकाई के स्तर पर संतुलन की दोनो शर्तें पूरी होती हैं। इस स्तर पर सीमान्त लागत और सीमान्त संप्राप्ति बराबर हैं और इस स्तर के बाद सीमान्त लागत सीमान्त संप्राप्ति से अधिक है।

रेखाचित्र

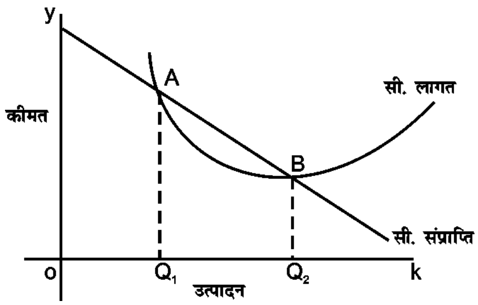

जब अधिक बिक्री कम कीमत पर संभव हो तो सीमान्त संप्राप्ति वक्र का नकारात्मक ढलान है। सीमान्त लागत वक्र U आकार की है। उत्पादक के संतुलन की पहली शर्त A और B दोनो बिंदुओं से दर्शाए जाने वाले उत्पादन के स्तरों पर पूरी हो रही है लेकिन दूसरी शर्त उत्पादन के केवल OQ_2 स्तर (जो B बिन्दु दर्शाता है)पर पूरी होती है। अत: उत्पादन का संतुलन स्तर OQ_2 है।

पूर्ण प्रतियोगिता में संतुलन कीमत

संतुलन का अर्थ

सामान्यत: संतुलन से अभिप्राय (क) दो विरोधी शक्तियों के बीच संतुलन तथा (ख) विश्राम की स्थिति यानि एक ऐसी स्थिति जिसमें बने रहने की प्रवृत्ति पाई जाती है। कुछ उदाहरण लेकर अर्थशास्त्र के संदर्भ में हम इनका अर्थ समझा सकते हैं।

एक ऐसा बाजार लें जिसमें क्रेता और विक्रेता सौदा करने में लगे हैं। दोनों अपनी अपनी कीमतों पर सौदा करना चाहते है। लेकिन सौदा तो उसी स्थिति में हुआ माना जाएगा जब दोनों एक कीमत और उस पर एक मात्रा के लिए राजी हो जाएँ। ध्यान दीजिए कि क्रेताओं और विक्रेताओं के स्वार्थ अलग-अलग होते हैं। क्रेता कम से कम कीमत देना चाहता है। दोनों का एक कीमत पर राजी होना दोनों के विपरीत स्वार्थो के बीच संतुलन लाता है। ऐसी संतुलन कीमत और मात्रा में बने रहने की स्थिति होती है।

संतुलन कीमत

संतुलन कीमत वह कीमत होती है जिस पर क्रेता और विक्रेता वस्तु की समान मात्रा खरीदने व बेचने को तैयार होते हैं। बाजार मांग और पूर्ती अनुसूची की सहायता से हम इसका अर्थ समझ सकते हैं।

बाजार मांग और पूर्ति अनुसूची

प्रति इकाई कीमत	बाजार मांग		बाजार पूर्ति	बाजार की स्थिति
1	1000	>	200	मांग अधिक्य
2	800	>	400	मांग अधिक्य
3	**600**	**=**	**600**	**बाजार संतुलन**
4	400	<	800	पूर्ति अधिक्य
5	200	<	1000	पूर्ति अधिक्य

अनुसूची में बाजार संतुलन 3 रुपये की कीमत पर स्थापित हुआ है क्योंकि इस कीमत पर बाजार मांग और बाजार पूर्ति एक समान हैं। यह एक ऐसी कीमत है जिसमें बने रहने की प्रवृत्ति है।

कोई और कीमत संतुलन कीमत क्यों नहीं है?

उदाहरण के तौर पर हम संतुलन कीमत से कम कीमत 2 रुपये प्रति इकाई लेते हैं। इस कीमत पर बाजार मांग बाजार पूर्ति से अधिक है। इसे मांग आधिक्य (excess demand) की स्थिति कहते हैं। लेकिन यह कीमत ठहरेगी नहीं। यह बदलेगी। क्यों?

क्योंकि क्रेता जितनी मात्रा खरीदना चाहते हैं नहीं खरीद पाएंगे! मांग आधिक्य का दबाव बाजार कीमत को ऊपर की ओर ले जाएगा। इसके दो प्रभाव होंगे। पूर्ति बढ़ेगी क्योंकि उत्पादक ऊँची कीमत पर अधिक उत्पादन करने के लिए तैयार रहते हैं। माँग गिरेगी क्योंकि क्रेता ऊँची कीमत पर कम खरीदते हैं। वास्तव में संतुलन की वापसी के लिए यही सब आवश्यक भी है। कीमत बढ़ने, पूर्ति बढ़ने और मांग घटने की प्रक्रिया तब तक जारी रहती है जब तक कि कीमत बढ़कर उस स्तर पर ना पहुँच जाए जिस पर बाजार मांग और बाजार पूर्ति बराबर हो जाए और मांग आधिक्य शून्य हो जाए।

आइए अब संतुलन कीमत से अधिक कीमत लें। मान लीजिए कि यह कीमत 4 रुपये प्रति इकाई है। इस कीमत पर बाजार पूर्ति बाजार मांग से अधिक है। इसे पूर्ति आधिक्य की स्थिति कहते है। यह कीमत भी बनी नहीं रह सकती क्योंकि उत्पादक उतनी मात्रा नहीं बेच पाएँगे जितनी कि वे इस कीमत पर बेचना चाहते हैं। इससे कीमत नीचे आएगी। इसके दो प्रभाव होंगे। पूर्ति कम होगी और मांग बढ़ेगी। ये परिवर्तन भी तब तक होते रहेंगे जब तक कि कीमत घटकर उस स्तर पर ना पहुँचे जिस पर बाजार मांग और बाजार पूर्ति बराबर हो जाएँ और कीमत 3 रुपये पर आकर ठहर जाएगी।

<u>रेखाचित्र प्रस्तुति (रेखाचित्र 11)</u>

संतुलन बिन्दु E पर है जहाँ मांग और पूर्ति वक्र एक दूसरे को काटते हैं। संतुलन कीमत 3 रुपये और संतुलन मात्रा 600 इकाई है। 3 रुपये से अधिक कीमत पूर्ति अधिक्य लाती है। अंतत: यह कीमत ऊपर बताए गए परिवर्त्तनों के कारण वापस 3 रुपये पर आ जाती है। 3 रुपये से कम कीमत मांग अधिक्य लाती है और ऊपर बताये गये परिवर्त्तनों के कारण वापस 3 रुपये पर आ जाती है। ये परिवर्त्तन तीर के रूप में दिखाये गए हैं।

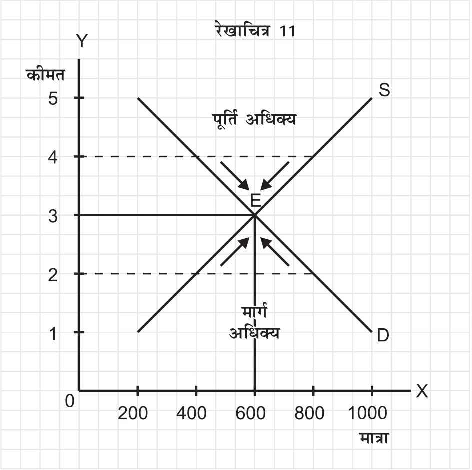

<u>क्या संतुलन कीमत बदल सकती है?</u>

हाँ, यदि मांग या पूर्ति या फिर दोनों में <u>वृद्धि</u> या <u>कमी</u> हो जाए। आप जानते है कि वृद्धि से अभिप्राय वस्तु की अपनी कीमत को छोड़ कर किसी भी अन्य कारण से मांग या पूर्ति के बढ़ने से है। कमी की परिभाषा भी इसी आधार पर की जाती है। इनके कारण मांग वक्र, पूर्ति वक्र या फिर दोनों खिसक जाते हैं। आप इन अवध ारणाओं से परिचित हैं। आप से यह आशा की जाती है कि मांग और पूर्ति के खिसकाव के संतुलन कीमत पर श्रृंखलाबद्ध प्रभावों का अध्ययन करें।

इकाई - 4

पूर्ण प्रतियोगिता की विशेषताएँ

भूमिका

पूर्ण प्रतियोगिता बाजार की एक अवस्था है। बाजार से अभिप्राय किसी भी माध्यम से क्रेताओं और विक्रेताओं के बीच सम्पर्क होने से है। यह सम्पर्क किसी स्थान पर आमने सामने का भी हो सकता है, या फिर टेलिफोन, इन्टरनेट आदि के माध्यम से बातचीत द्वारा भी हो सकता है।

व्यष्टि अर्थशास्त्र में बाजारों का परम्परागत वर्गीकरण इस प्रकार है : पूर्ण प्रतियोगिता, एकाधिकार, एकाधिकारिक प्रतियोगिता तथा अल्पाधिकार। इस वर्गीकरण के कई आधार हैं : विक्रेताओं की संख्या, वस्तुओं में समानता, सूचना की उपलब्धि, फर्मों की गतिशीलता, आगतों की गतिशीलता आदि। आधार कुछ भी हो इसका परिणाम इस बात से पता चलता है कि एक अकेला विक्रेता स्वयं बाजार को कितना प्रभावित कर सकता है। उसका प्रभाव जितना कम होता है बाजार में प्रतियोगिता उतनी ही अधिक मानी जाती है। यदि एक विक्रेता का प्रभाव शून्य हो तो उस बाजार को पूर्णतया प्रतियोगी बाजार कहा जाता है।

अर्थ

पूर्ण प्रतियोगिता की परिभाषा या तो उसकी विशेषताओं के आधार पर या फिर इन विशेषताओं के परिणाम के आधार पर की जा सकती है। ऐसा परिणाम जो केवल पूर्ण प्रतियोगी बाजार में ही पाया जाता है। विशेषताओं के आधार पर पूर्ण प्रतियोगी बाजार ऐसा बाजार है जिसमें क्रेताओं और विक्रेताओं की बड़ी संख्या होती है, फर्में समरूप वस्तुओं का उत्पादन करती हैं, क्रेताओं और विक्रेताओं को पूरी जानकारी होती है, तथा फर्मों को उद्योग में प्रवेश करने और उद्योग छोड़ने की पूरी स्वतंत्रता होती है। विशेषताओं के परिणाम के आधार पर एक पूर्ण प्रतियोगी बाजार ऐसा बाजार है जिसमें एक अकेली फर्म स्वयं अपने प्रयत्नों से वस्तु की बाजार कीमत को प्रभावित नहीं कर सकती।

विशेषताएँ और उनसे आशय

एक पूर्ण प्रतियोगी बाजार की निम्नलिखित विशेषताएँ है:

(1) विक्रेताओं और क्रेताओं की बड़ी संख्या

यहाँ बड़ी संख्या से अभिप्राय किसी विशेष संख्या से नहीं है। लेकिन इसके पीछे एक आशय ज़रूर है। पहले हम विक्रेताओं की अधिक संख्या की बात करते हैं। बड़ी संख्या से आशय इस बात से है कि संख्या इतनी अधिक है कि कुल बाजार पूर्ति में एक अकेले विक्रेता का योगदान एक मामूली योगदान है। 'मामूली से आशय यह है कि एक अकेला विक्रेता अपना उत्पादन घटा या बढ़ा कर वर्तमान बाजार कीमत को प्रभावित नहीं कर सकता। बाजार मांग और बाजार पूर्ति की शक्तियों के द्वारा बाजार कीमत निर्धारित होती है। एक अकेले उत्पादक के पास इसके सिवाय कोई विकल्प नहीं होता है कि वह बाजार द्वारा निर्धारित कीमत पर बेचे। एक अकेले

विक्रेता की बाजार में इस स्थिति को 'कीमत स्वीकारक' (price taker) की संज्ञा दी जाती है। पूर्ण प्रतियोगी बाजार की यह एक अद्वितीय विशेषता है।

इसी तरह क्रेताओं की बड़ी संख्या से भी यही आशय है। एक अकेले खरीदार का कुल बाजार मांग में इतना मामूली हिस्सा होता है वह स्वयं अकेला बाजार कीमत को प्रभावित नहीं कर सकता। वह भी एक कीमत स्वीकारक ही रहता है।

संक्षेप में, क्रेताओं और विक्रेताओं की 'बड़ी संख्या' से आशय एक क्रेता या एक विक्रेता की बाजार कीमत पर प्रभावहीनता से है, और वे केवल कीमत-स्वीकार की भूमिका ही अदा करते हैं।

(2) <u>उद्योग में सभी फर्मों के उत्पाद समरूप हैं</u>

इसका अर्थ यह है कि क्रेता सभी फर्मों के उत्पादों को समरूप (homogeneous) मानते हैं। फर्मों के उत्पाद या तो एक जैसे होते है, या उन्हें एक जैसा माना जाता है, या फिर पूर्णतया मानकीकृत होते हैं। क्रेता फर्मों के उत्पादों में भेद नहीं करते।

इस विशेषता से आशय यह है कि क्योंकि क्रेता सभी फर्मों के उत्पादों को एक जैसा मानते हैं वे किसी भी उत्पाद के लिए अलग कीमत देने को तैयार नहीं होते। वे उद्योग की सभी फर्मों के उत्पादों की एक जैसी कीमत लगाते हैं। दूसरी ओर यदि कोई फर्म अधिक कीमत पर बेचना भी चाहे तो नहीं बेच पाएगी।

(3) <u>उत्पादों और आगतों के बाजारों के बारे में पूरी जानकारी</u>

फर्मों को उत्पाद और आगत बाजारों के बारे में पूरी जानकारी है। क्रेताओं को भी उत्पाद बाजार की पूरी जानकारी है।

आइए पहले उत्पाद बाजार के बारे में बात करें। इस बाजार में पूर्ण जानकारी से अभिप्राय इस बात से है कि यदि कोई फर्म अपना उत्पाद बाजार कीमत से अधिक पर बेचना चाहे तो सफल नहीं हो पाएगी। क्रेता अधिक कीमत देंगे ही नहीं क्योंकि उन्हें पूरी जानकारी है। बाजार में अज्ञान नहीं है। बाजार में एक समान कीमत रहती है।

आगत बाजारों के बारे में पूर्ण जानकारी से आशय यह है कि हर फर्म की प्रौद्योगिकी और इसमें प्रयोग में आने वाली आगतों तक पूरी पहुँच है। किसी भी फर्म को किसी भी प्रकार का लागत में लाभ नहीं मिलता। सभी फर्मों का लागत ढांचा एक समान होता है।

अब क्योंकि सभी फर्मों का एक समान कीमत और एक समान लागत ढांचा होता है, सभी फर्मों को एक समान लाभ भी मिलते हैं।

(4) <u>फर्मों को दीर्घकाल में उद्योग में प्रवेश करने और उद्योग से बाहर जाने की स्वतंत्रता</u>

प्रवेश की स्वतंत्रता से अभिप्राय यह है कि कोई नयी फर्म उद्योग में प्रवेश करना चाहे तो उसके रास्ते में बनावटी या प्राकृतिक रूकावटें नहीं आती हैं। बनावटी रूकावटें पेटेंट अधिकार, कानूनी रोक आदि का रूप लेती

है। फर्म शुरू करने के लिये भारी पूंजी की आवश्यकता जो कि एक फर्म जुटाने में असफल रहती है, प्राकृतिक रूकावट का एक उदाहरण है।

उद्योग छोड़ने की स्वतंत्रता से अभिप्राय है उद्योग छोड़ने में कोई रूकावट न आना। सरकारी नियम, श्रम कानून, भारी मात्रा में स्थिर पूंजी की हानि आदि इन रूकावटों के कुछ उदाहरण हैं।

फर्मों की स्वतंत्रता का एक महत्वपूर्ण अर्थ है। यह स्वतंत्रता यह सुनिश्चित करती है कि प्रत्येक फर्म दीर्घकाल में केवल सामान्य लाभ ही कमाएगी। सामान्य लाभ से अभिप्राय व्यवसाय में बने रहने के लिए एक न्यूनतम आवश्यक लाभ से है। व्यष्टि अर्थशास्त्र में सामान्य लाभ को अवसर लागत माना जाता है और कुल लागत में गिना जाता है। लाभ कुल आगम और कुल लागत का अंतर है। अतः यदि एक फर्म केवल सामान्य लाभ ही कमाती है, तो इसे 'शून्य आर्थिक लाभ' कहा जाता है। क्यों?आइए समझें।

मान लीजिए कि वर्तमान फर्में सामान्य लाभ से अधिक लाभ कमा रही हैं। यानि उसको घनात्मक आर्थिक लाभ हो रहे हैं। इस लाभ से आकर्षित होकर नयी फर्में उद्योग में प्रवेश करती हैं। उद्योग का उत्पादन यानि बाजार पूर्ति बढ़ जाती है। कीमत गिर जाती है। नई फर्में प्रवेश करती रहती हैं, कीमत गिरती रहती हैं, जब तक कि आर्थिक लाभ घट कर शून्य न हो जाएं।

अब मान लीजिए कि वर्तमान फर्मों को हानि हो रही है। फर्में उद्योग छोडने लगती हैं। उद्योग का उत्पादन गिरने लगता है, कीमत बढ़ने लगती है, और ऐसा तब तक होता रहता है जब तक हानि समाप्त न हो जाए। हानि समाप्त होने पर बाकी बची फर्में फिर एक बार सामान्य लाभ पर आ जाती हैं।

दीर्घकाल में केवल सामान्य लाभ यानि शून्य आर्थिक लाभ होना पूर्ण प्रतियोगी बाजार का एक महत्वपूर्ण परिणाम है।

<u>एक पूर्ण प्रतियोगी फर्म की औसत संप्राप्ति और सीमांत संप्राप्ति वक्र</u>

बाजार मांग (सभी क्रेताओं की मांग) और बाजार पूर्ति (उद्योग द्वारा पूर्ति) की शक्तियाँ बाजार कीमत का निर्धारण करती हैं। कीमत स्वीकारक फर्में इस कीमत को अपनाती हैं और इस कीमत पर कोई भी मात्रा बेचने के लिए स्वतंत्र रहती हैं। कीमत स्वीकारक विशेषता फर्म के औसत संप्राप्ति और सीमांत संप्राप्ति वक्रों के आकार का निर्धारण करती है। रेखाचित्र 12 को देखिए

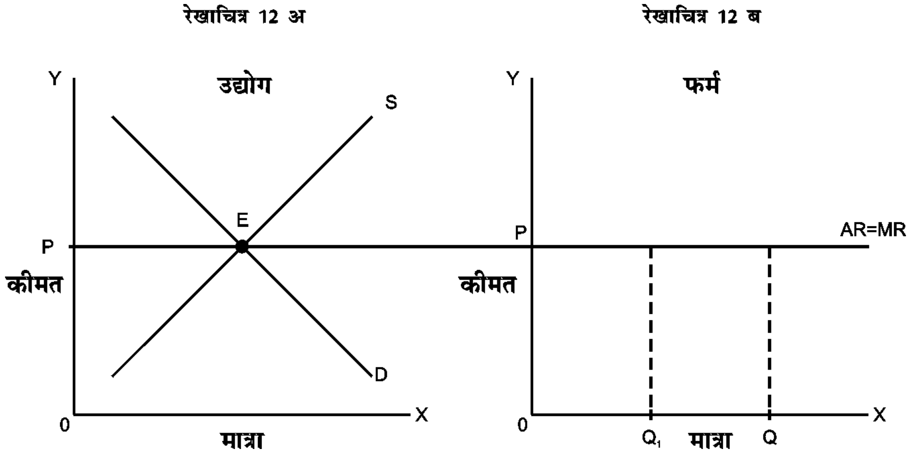

रेखाचित्र 12अ में मांग और पूर्ति वक्रों द्वारा E बिन्दु पर संतुलन कीमत का निर्धारण दिखाया गया है। यह कीमत OP है। रेखाचित्र 12ब में दिखाया गया है कि कीमत स्वीकारक फर्म इस कीमत को अपनाती है और इस कीमत पर कोई भी मात्रा बेचने के लिए स्वतंत्र है। इससे फर्म की औसत संप्राप्ति वक्र पूर्णतया लोचदार हो जाती है और OX-अक्ष के समानांतर रहती है। औसत व सीमांत सम्बन्धों के अनुसार यदि औसत संप्राप्ति स्थिर हो, तो सीमांत संप्राप्ति औसत संप्राप्ति के बराबर होती है। इस प्रकार फर्म की औसत संप्राप्ति वक्र फर्म की सीमांत संप्राप्ति वक्र भी कहलाती है।

अल्पाधिकार

अर्थ:

अल्पाधिकार वह बाजार स्थिति है जिसमें उद्योग में केवल कुछ फर्म ही होती हैं (या कुछ बड़ी फर्म होती हैं जो उद्योग का अधिकांश भाग उत्पादित करती हैं।) जो कीमत और उत्पादन सम्बन्धी निर्णयों के लिए एक दूसरे पर निर्भर करती है। इस परिभाषा से अल्पाधिकार की दो विशेषताएँ पता लगती हैं, कुछ फर्म और उनकी परस्पर निर्भरता।

अल्पाधिकार के विभिन्न प्रकार:

यदि अल्पाधिकार बाजार में फर्म समरूप वस्तु का उत्पादन करती है तो उसे पूर्ण अल्पाधिकार कहते हैं। यदि फर्म विभेदी वस्तु का उत्पादन करती हैं तो इसे अपूर्ण अल्पाधिकार कहते हैं। यदि अल्पाधिकार बाजार में फर्म एक दूसरे के साथ प्रतियोगिता करती हैं तो इसे गैर-सहयोगी अल्पाधिकार कहते हैं। यदि वे एक दूसरे के साथ कीमत व उत्पादन निर्धारण में सहयोग करती हैं तो इसे सहयोगी अल्पाधिकार कहते हैं। जब केवल दो फर्म होती हैं तो इसे द्वियधिकार कहते हैं।

विशेषताएँ

(1) कुछ ही फर्म

इसका अर्थ है कि या तो संख्या के रूप में कुछ ही फर्म हैं या कुछ बड़ी फर्म उद्योग के उत्पादन का अधिकांश भाग उत्पादित करती हैं। कोई निश्चित संख्या नही होती। 'कुछ' शब्द से तात्पर्य यह है कि एक फर्म द्वारा प्रतिद्वन्द्वी फर्मों की प्रतिक्रियाओं के बारे में अनुमान लगाना सम्भव होता है।

(2) कीमत व उत्पादन सम्बन्धी निर्णय लेने में पारस्परिक निर्भरता

जब फर्मों की संख्या सीमित होती है तो यह संभव है कि उन्हें एक दूसरे के काम करने के तरीके के बारे में जानकारी हो। यदि एक फर्म वस्तु की कीमत व उत्पादन स्तर के बारे में निर्णय लेती है तो अन्य फर्म इसे ध्यान में रखकर प्रतिक्रिया के रूप में अपने उत्पादन और कीमत की योजना में बदलाव लाती है। इसलिए कोई भी निर्णय लेने से पहले इस पर विचार करती है कि इस निर्णय के प्रति अन्य फर्मों की क्या प्रतिक्रिया होगी। इस प्रकार इस बाजार में फर्मों की परस्पर निर्भरता होती है।

(3)   नई फर्मों के आने पर अवरोध

अवरोधों के कारण फर्म की संख्या कम होती है। ये अवरोध विभिन्न रूपों में हो सकते हैं जैसे कि पेटेंट, अधिक पूँजी, महत्वपूर्ण कच्चे माल पर नियंत्रण आदि। जो फर्म इन अवरोधों को पार कर सकती है वही उद्योग में प्रवेश कर सकती है।

फर्म कीमत प्रतिस्पर्धा से बचने की कोशिश करती है क्योंकि इससे बहुत हानि हो सकती है। इसलिए प्रतिस्पर्धा के अन्य तरीके अपनाए जाते हैं जैसे विज्ञापनों के द्वारा, ग्राहकों को अच्छी सेवा प्रदान करके।